नईदुनिया

संपादकीय

स्मार्ट सिटी के नाम पर स्मार्ट लूट

15 करोड़ फूँक डाले और बचा कचरा

भोपाल *को स्मार्ट बनाने के नाम पर जो तमाशा हुआ, वह अब किसी से छिपा नहीं है। 15 करोड़ रुपये पानी की तरह बहा दिए गए और हाथ आया तो सिर्फ टूटा-फूटा डस्टबिन और कचरे से भरा अंडरग्राउंड स्मार्ट स्टेशन। यह स्मार्ट सिटी नहीं, स्मार्ट लूट है और यह लूट सेंसर वाले स्मार्ट डस्टबिन के नाम पर की गई है।*

पांच करोड़ रुपये रियल टाइम टाउन प्रोजेक्ट में उड़ा दिए गए। दस करोड़ रुपये स्मार्ट साइकिल और स्मार्ट डस्टबिन प्रोजेक्ट में झोंक दिए गए। कुल 15 करोड़ रुपये का हिसाब है और नतीजा शून्य। आज शहर की सड़कों पर वही पुराने कूड़ेदान खड़े हैं, वही बदबू और वही गंदगी। डस्टबिन सेंसर से खुलने का दावा करते थे, लेकिन वे खुद ही कबाड़ बन चुके हैं। अंडरग्राउंड स्मार्ट स्टेशन, जिस पर 28 लाख रुपये खर्च हुए, आज कचरे का अड्डा बन चुका है। उसका ऑटोमेटिक ढक्कन दो दिन चला और फिर हमेशा के लिए बंद हो गया।

यह पहला घोटाला नहीं है। यह उसी सोच का नतीजा है, जहां विकास के नाम पर कमीशन तय होता है और जनता को ठेंगा दिखाया जाता है। स्मार्ट सिटी का मतलब था शहर में तकनीक, सफाई, सुविधा और पारदर्शिता। भोपाल में स्मार्ट सिटी का मतलब बन गया ठेकेदारी, मोटा मुनाफा और कागजों पर विकास।

सबसे बड़ा सवाल यह है कि 15 करोड़ रुपये किसकी जेब में गए? टेंडर किसे मिला? सामान कहां से आया? गुणवत्ता की जांच किसने की? किस अधिकारी ने फाइल पास की और किसने हरी झंडी दी? जवाब कोई नहीं देगा, क्योंकि इस व्यवस्था में जवाबदेही नाम की चीज बची ही नहीं है।

जमीन पर हकीकत देखिए। स्मार्ट डस्टबिन लगाने के लिए पहले सड़कें खोदी गईं, फिर पाइपलाइन बिछी, फिर सेंसर लगाए गए और उसके बाद सब बंद हो गया। अब वही जगह गड्ढों में तब्दील है और नगर निगम कहता है कि मेंटेनेंस नहीं हो पा रहा। मतलब पैसा खर्च करने के बाद भी रखरखाव के लिए पैसा नहीं। यह कैसी स्मार्टनेस है, जहां मशीनें दो महीने भी नहीं चलतीं?

दूसरी तरफ स्मार्ट साइकिल प्रोजेक्ट था। दावा किया गया कि शहर में 2500 साइकिलें दौड़ेंगी, ऐप से बुक होंगी और पर्यावरण बचेगा। हकीकत यह है कि साइकिलें गायब हैं, स्टैंड टूटे पड़े हैं और जो बची हैं, वे भी बेकार हैं। लाखों सदस्यों के जुड़ने का दावा किया गया, लेकिन आज कोई पूछने वाला नहीं। प्रोजेक्ट शुरू करने के बाद उसे भुला दिया गया और फाइल बंद कर दी गई।

यह सिर्फ पैसे की बर्बादी नहीं, बल्कि जनता के भरोसे की हत्या है। जिस शहर में हर गली में कचरा पड़ा हो, जहां नालियां जाम हों और पीने का पानी टैंकर से आता हो, वहां 15 करोड़ रुपये सेंसर वाले डस्टबिन पर खर्च करना जनता के साथ अन्याय है। अब समय आ गया है कि पूरे प्रोजेक्ट का सार्वजनिक ऑडिट हो, जिम्मेदारों की जवाबदेही तय हो और दोषियों पर कार्रवाई हो। विकास दिखावे से नहीं, ईमानदार काम और जवाबदेही से होता है।

आजकल

कोचिंग में ताला, सुरक्षा पर सवाल

भोपाल में नगर निगम की एक कार्रवाई ने पूरे कोचिंग तंत्र की सच्चाई सामने ला दी है। शहर के 31 कोचिंग संस्थानों को एक साथ सील कर दिया गया, क्योंकि वहां अग्नि सुरक्षा के नाम पर लगभग कुछ भी नहीं था। यह कदम ऐसे समय उठाया गया, जब एक हादसे के बाद पूरे देश में कोचिंग संस्थानों की सुरक्षा पर बहस शुरू हुई। सवाल यह है कि प्रशासन हमेशा किसी दुर्घटना के बाद ही क्यों जागता है?

कोचिंग आज शिक्षा नहीं, बल्कि बड़ा बाजार बन चुकी है। लाखों रुपये फीस लेने वाले कई संस्थानों ने सुरक्षा पर न्यूनतम निवेश भी नहीं किया। जांच में सामने आया कि अधिकांश के पास फायर एनओसी नहीं थी। 10 हजार लीटर पानी की टंकी, 450 एलपीएम क्षमता का फायर पंप, इमरजेंसी निकास, धुआं निकालने की व्यवस्था और नियमित मॉक ड्रिल जैसी अनिवार्य व्यवस्थाएं भी नहीं थीं। कई जगह कर्मचारियों को अग्निशमन यंत्र चलाना तक नहीं आता था।

सबसे बड़ा सवाल यह है कि ये संस्थान वर्षों से चल रहे थे तो निरीक्षण कौन कर रहा था? लाइसेंस किस आधार पर दिए गए? अब जब 31 संस्थान बंद हुए तो हजारों छात्रों की पढ़ाई प्रभावित हुई और उनकी फीस का क्या होगा?

नियम स्पष्ट हैं कि 200 से अधिक क्षमता वाले बेसमेंट में कोचिंग नहीं चल सकती। ऑटोमैटिक डोर लॉक, फायर सिस्टम और नियमित मॉक ड्रिल अनिवार्य हैं। इसके बावजूद कई संचालकों ने किराया बचाने के लिए तहखानों में कक्षाएं चलाईं और सुरक्षा को नजरअंदाज किया।

सरकार को चाहिए कि हर कोचिंग संस्थान की फायर एनओसी और सुरक्षा रिपोर्ट सार्वजनिक पोर्टल पर उपलब्ध कराए। नियम तोड़ने वाले संचालकों के साथ-साथ लापरवाही बरतने वाले अधिकारियों की भी जवाबदेही तय हो। कोचिंग का उद्देश्य भविष्य बनाना है, उसे छात्रों की सुरक्षा से समझौता करने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

इस विशाल पथ पर

श्रीमती द्रौपदी मुर्मु भारत की राष्ट्रपति

बचपन से मुझे श्रीजगन्नाथ जी की अनेक प्रार्थनाएँ और भजन याद हैं। स्कूल और कॉलेज में पढ़ते समय मैं गीत गाया करती थी। जगन्नाथ जी का भजन गाकर मैं खुश होती थी। महाप्रभु को अपने निकट पाती थी। अब गीत नहीं गाती। किंतु साँझ-सबेरे महाप्रभु का स्मरण करके उनके भजन गुनगुना लेती हूँ। मुझे लगता है कि महाप्रभु हर वक़्त मेरे आस-पास ही रहते हैं। विपदा-आपदा में मेरी मदद करते हैं। भक्तकवि मधुसूदन राव का गीत आज भी मैं मन ही मन गाती हूँ:

'मेरे पास दिन-रात रहते हैं महाप्रभु परमेश्वर,
यह बात याद कर हृदय में पूजूँगा उन्हें निरंतर।'

मैं कुछ समझने-बूझने की उम्र में पहुंचने तक जगन्नाथ जी को जानने लगी थी। हमारे घर में अक्सर जगन्नाथ जी की चर्चा होती थी। गाँव के हर टोले में उनकी महिमा का बखान होता था। जब मैं गाँव के स्कूल में पढ़ती थी, भक्त सालबेग की 'आहे नीड़ो शोइड़ो' प्रार्थना गाई जाती थी। स्कूल के शिक्षक जगन्नाथ जी के बारे में तरह-तरह की बातें कहा करते थे। पुरी में बड़ा मंदिर है, इतना बड़ा मंदिर और कहीं नहीं है! मंदिर में श्रीजगन्नाथ जी अपनी बहन सुभद्रा और बड़े भाई बलभद्र के साथ पूजे जाते हैं। जगन्नाथ जी का रंग काला है, उनकी आँखें गोल-गोल हैं। सुभद्रा जी का रंग पीला है, बलभद्र है चाँदनी फूल की तरह सफेद। वह छवि एक बार देख लेने के बाद फिर भुलाए नहीं भूलती। सर यह भी कहते थे, जगन्नाथ हैं 'महाप्रभु', उनका प्रसाद 'महाप्रसाद' है, उनका मंदिर 'बड़ा मंदिर' है, उनका पथ 'विशाल पथ' (बोड़ो दांडो) है, और उनका समुद्र 'महोदधि' है। मयूरभंज के उपरबेड़ा गाँव से पुरुषोत्तम क्षेत्र पुरी की दूरी बहुत थी! भला देखने का अवसर मुझे कहाँ मिलता। किंतु मैं भुवनेश्वर गई और मैंने यूनिट-2 के गर्ल्स हाईस्कूल में नाम लिखवाया। हॉस्टल में रहने लगी। उसके बाद मैंने पुरी, भुवनेश्वर और कोणार्क देखा। पहली बार जगन्नाथ दर्शन की स्मृति मेरे मन से मिटी नहीं है। बहुत बड़ा मंदिर, बड़े-बड़े देवता! भला ये सब भुलाए जा सकते हैं?

क्या भुलाई जा सकती है उनकी रथयात्रा? बारह महीने में तेरह पर्व-त्योहार मनाए जाते हैं श्रीक्षेत्र में। लेकिन रथयात्रा की छटा तो निराली होती है। पूरे वर्ष भक्तगण यहाँ आकर महाप्रभु का दर्शन करते हैं मंदिर के अंदर जाकर। किंतु वर्ष में एक बार महाप्रभु अपने भव्य मंदिर से बाहर 'विशाल पथ' (बोड़ो दांडो) पर आते हैं। भक्तों को दर्शन देते हैं। तीन रथ पर तीन ठाकुर बैठकर चक्रराज सुदर्शन के साथ गुंडिचा मंदिर की ओर यात्रा करते हैं। वहाँ सात दिनों तक रहकर वापस लौट आते हैं। महाप्रभु का यह महापर्व अतुलनीय है। बचपन से मैं जगन्नाथ जी की भक्त हूँ। वे सर्वदा मेरे परम आराध्य हैं। मेरे जीवन के उत्थान और पतन के वे नियंता हैं। मेरे दुख-सुख के कर्ता-धर्ता हैं। जीवन में मैंने बहुत कष्ट भी सहे हैं। उन सब दारुण दुखों से उबारा है मुझे महाबाहु ने। मैं उनकी बेटी जो हूँ!

राष्ट्रपति पद के लिए मुझे उम्मीदवार बनाने की घोषणा होते ही मैंने महाप्रभु का स्मरण किया। इतनी ऊँचाई पर मुझे ले जा रहे हो प्रभु, पग-पग पर मुझे सहारा देना, सदा मेरे पास रहना - यह मेरी प्रार्थना थी। उन्होंने मेरी प्रार्थना सुनी, सुन भी रहे हैं। राष्ट्रपति पद की उम्मीदवार के रूप में दिल्ली में रहने के दौरान रथयात्रा का महापर्व आया। परंतु पुरी जाना संभव नहीं था। रथयात्रा के दिन बड़े भोर में दिल्ली के हौजखास में बने जगन्नाथ मंदिर जाकर मैंने महाप्रभु के दर्शन किए। आनंद से भर गया मन। उनका आशीष मुझ पर बरस गया। बड़े आत्मविश्वास से मैंने अपना नामांकन-पत्र दाखिल किया। अत्यंत उत्साह से चुनाव कैंपेन में भाग लिया। 25 जुलाई, 2022 को पार्लियामेंट के सेंट्रल हॉल में शपथ लेने जाते समय मैं जगन्नाथ जी से प्रार्थना करते-करते जा रही थी। उनके आशीर्वाद से मेरा शपथ-पाठ खूब अच्छी तरह संपन्न हुआ। राष्ट्रपति के रूप में मेरे प्रथम भाषण के समय मानो वे मेरे साथ ही थे।

पुरी जाकर महाप्रभु के दर्शन के लिए मेरा मन व्याकुल हो उठा। दिन बीतते चले गए, लेकिन मैं पुरी नहीं जा सकी। मुझे लगा कि बिना उनके बुलावे के कोई कैसे उनके पास जा सकता है! मैंने मन ही मन उनसे कहा, मेरा कोई दोष हो तो क्षमा करो प्रभु, मुझे पुरी बुलाओ, दर्शन दो। वे 'भाव' के ठाकुर हैं। मेरा 'भाव' कैसे नहीं समझते? कुछ ही दिनों में पुरी जाने का कार्यक्रम तय हो गया। उस दिन 10 नवंबर, 2022 था। पुरी में अवतरण करने के बाद कार-केड चल पड़ा श्रीमंदिर की ओर। कार-केड पुरी के प्रशस्त पावन-पथ पर पहुँचते ही मेरे अंदर एक अपूर्व भावना का संचार हुआ। यह विशाल-पथ महाप्रभु जगन्नाथ का ही है। यहाँ क्या आवश्यकता है प्रोटोकॉल की? पुरी तो क्षेत्रराज के रूप में प्रसिद्ध है। महाप्रभु देवाधिदेव हैं। और अधिक कुछ सोचने से पहले मैंने गाड़ी रुकवाई। मेरी गाड़ी रुकने पर पीछे आ रही सारी गाड़ियाँ रुक गईं। किसी के कुछ समझने से पहले मैंने पावन-पथ पर नंगे पैर चलना शुरू कर दिया। श्रीमंदिर लगभग दो किलोमीटर दूर था। मंदिर के नीलचक्र और पतित पावन-ध्वज को देखते हुए मैं आगे बढ़ती चली गई।

पथ के दोनों किनारों पर खड़े बच्चों, महिलाओं, युवा-छात्रों और बुजुर्गों को नमस्कार भी करती जा रही थी। मेरा ध्यान था जगन्नाथ जी के पास। श्रीमंदिर के सिंहद्वार के पास पहुंचते ही मैं स्थिर नहीं रह पाई। तब तक मैं खुद को भूल चुकी थी। पावन-पथ की धूल में साष्टांग लेटकर मैंने महाप्रभु को प्रणाम किया। उसके बाद मंदिर में प्रवेश। गर्भगृह में पहुंचकर चतुर्धा मूर्तियों का दर्शन करते ही मैं आनंद से अभिभूत हो गई। महाप्रभु जगत के नाथ हैं, अनाथों के नाथ हैं। जगत के लोगों का दु:ख दूर करने के लिए वे सदा तत्पर रहते हैं। इसलिए उनकी गोल-गोल आँखों की पलकें कभी नहीं झपकतीं। उनके लिए छोटा-बड़ा कोई नहीं है। वे सबको सामान दृष्टि से देखते हैं, समता के मंत्र से सबको अभिमंत्रित करते हैं। उनकी करुणा पाकर ही मैंने समाज के हर वर्ग की सेवा में स्वयं को समर्पित किया है। गोल-गोल आँखों वाले की ओर देखते हुए करबद्ध होकर बोली, आपके आशीर्वाद से मेरा यह समर्पण भाव हमेशा बना रहे, हे महाबाहु। देश-दुनिया पर अपनी छत्र-छाया बनाये रखें, हे कृपानिधि! यह कहते हुए मैं भक्तिभाव से विह्वल हो उठी।

नए वोटर के लिए एसआईआर जरूरी ...

मतदाता सूची की शुद्धता और पारदर्शिता सुनिश्चित करने की दिशा में चुनाव आयोग ने एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है। अब नए मतदाता का नाम जोड़ने के लिए भी एसआईआर (विशेष गहन पुनरीक्षण) से संबंधित जानकारी देना अनिवार्य कर दिया गया है। इसके लिए ऑनलाइन फॉर्म-6 के प्रारूप में बदलाव किया गया है। हालांकि, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 तथा उसके नियमों में अभी कोई औपचारिक संशोधन नहीं हुआ है और हार्ड कॉपी के माध्यम से आवेदन करने की प्रक्रिया पहले की तरह ही जारी रहेगी।

चुनाव आयोग के पोर्टल पर उपलब्ध फॉर्म-6 में भाग 'जे' और 'के' के बीच एक नया घोषणा-पत्र जोड़ा गया है। यह घोषणा-पत्र भरना अनिवार्य होगा। इसके बिना ऑनलाइन आवेदन सबमिट नहीं किया जा सकेगा। यानी अब प्रत्येक नए आवेदक को यह बताना होगा कि उसका नाम अथवा उसके माता-पिता या दादा-दादी का नाम पिछली एसआईआर की मतदाता सूची में दर्ज है या नहीं।

आयोग ने इसके लिए तीन विकल्प दिए हैं। पहला, मेरा नाम पिछली एसआईआर की मतदाता सूची में मौजूद है। दूसरा, मेरे माता-पिता या दादा-दादी का नाम पिछली एसआईआर की मतदाता सूची में मौजूद है। तीसरा, न तो मेरा नाम और न ही मेरे माता-पिता या दादा-दादी का नाम पिछली एसआईआर की मतदाता सूची में मौजूद है।

यदि आवेदक पहले या दूसरे विकल्प का चयन करता है, तो उसे संबंधित विधानसभा क्षेत्र, मतदान केंद्र (बूथ) तथा पिछली एसआईआर में अपने या अपने माता-पिता के नाम की क्रम संख्या भी दर्ज करनी होगी। इस नई व्यवस्था का उद्देश्य डुप्लिकेट नाम, फर्जी प्रविष्टियों तथा एक से अधिक स्थानों पर नाम दर्ज होने जैसी समस्याओं को रोकना है। जिन राज्यों में हाल ही में एसआईआर की प्रक्रिया पूरी हुई है, वहां यह नया कॉलम सबसे पहले लागू किया गया है। चुनाव आयोग का मानना है कि मतदाता सूची की शुद्धता तभी सुनिश्चित हो सकती है, जब नई प्रविष्टियों का भी पुराने रिकॉर्ड से मिलान किया जाए। पहले यह जांच केवल विशेष पुनरीक्षण के

दौरान होती थी, लेकिन अब इसे नाम जोड़ने की प्रक्रिया का भी हिस्सा बना दिया गया है।

यह बदलाव तकनीकी रूप से भले छोटा दिखाई दे, लेकिन इसका प्रभाव व्यापक हो सकता है। इससे फर्जी मतदाता बनने की संभावना कम होगी और परिवारों की पीढ़ी-दर-पीढ़ी मतदाता सूची में निरंतरता भी बनी रहेगी। कई बार ऐसा होता था कि कोई व्यक्ति दूसरे राज्य या जिले में जाकर नए पते पर अपना नाम जुड़वा लेता था, जबकि पुराने पते से उसका नाम नहीं हटता था। नए कॉलम के माध्यम से ऐसे मामलों की पहचान करना अपेक्षाकृत आसान होगा।

हालांकि, इस बदलाव को लेकर कुछ सवाल भी उठ रहे हैं। पहला, जिन लोगों के माता-पिता के पास पुराने दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं या जिनके परिवार का नाम किसी कारणवश पिछली एसआईआर में दर्ज नहीं था, उन्हें कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है। दूसरा, ग्रामीण और दूर-दराज के क्षेत्रों में इंटरनेट और आवश्यक दस्तावेजों की कमी के कारण ऑनलाइन आवेदन करना आसान नहीं होगा। तीसरा, यह घोषणा-पत्र अनिवार्य तो कर दिया गया है, लेकिन यदि कोई व्यक्ति इसमें गलत जानकारी देता है तो उसके विरुद्ध क्या कार्रवाई होगी, यह अभी स्पष्ट नहीं किया गया है।

चुनाव आयोग ने स्पष्ट किया है कि नियमों में संशोधन का अधिकार केंद्र सरकार के पास है और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 की धारा 28 के तहत ही आगे की प्रक्रिया होगी। फिलहाल केंद्र सरकार की ओर से नियमों में किसी संशोधन की अधिसूचना जारी नहीं की गई है। इसलिए हार्ड कॉपी के माध्यम से आवेदन करने की मौजूदा व्यवस्था पूर्ववत लागू रहेगी।

इस मुद्दे पर राजनीतिक दलों की प्रतिक्रिया भी मिली-जुली रही है। कुछ दलों ने इसे मतदाता सूची को अधिक पारदर्शी और त्रुटिरहित बनाने की दिशा में स्वागत योग्य कदम बताया है, जबकि कुछ का मानना है कि इससे नए मतदाताओं, विशेषकर 18 वर्ष की आयु पूरी करने वाले युवाओं के लिए प्रक्रिया कुछ जटिल हो सकती है, क्योंकि उन्हें अपने माता-पिता या परिवार के पुराने मतदाता विवरण जुटाने में कठिनाई आ सकती है।

मतदाता जागरूकता के दृष्टिकोण से भी यह बदलाव महत्वपूर्ण है। अब स्कूलों, कॉलेजों और विशेष मतदाता पंजीकरण शिविरों में युवाओं को केवल फॉर्म-6 भरना ही नहीं सिखाया जाएगा, बल्कि उन्हें अपने परिवार के पुराने मतदाता रिकॉर्ड की जानकारी रखने के लिए भी प्रेरित किया जाएगा। इससे परिवारों में मतदाता सूची के प्रति जागरूकता बढ़ेगी।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि चुनाव आयोग मतदाता सूची को अधिक शुद्ध, पारदर्शी और त्रुटिरहित बनाने की दिशा में लगातार प्रयास कर रहा है। फॉर्म-6 में एसआईआर से संबंधित कॉलम जोड़ना उसी प्रक्रिया का हिस्सा है। इसका उद्देश्य लोकतंत्र को मजबूत करना और प्रत्येक पात्र नागरिक का नाम सही ढंग से मतदाता सूची में शामिल करना है। अब यह देखना होगा कि बीएलओ और चुनाव अधिकारी इस नई व्यवस्था को जमीनी स्तर पर कितनी सहजता से लागू कर पाते हैं और आम नागरिक इसे कितनी आसानी से समझकर अपने मताधिकार का उपयोग सुनिश्चित कर पाता है। अंतत: लोकतंत्र की मजबूती इसी में है कि मतदाता सूची में हर पात्र नागरिक का नाम हो और कोई भी अपात्र नाम उसमें शामिल न रहे।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

देवभूमि से देवता भी कर रहे पलायन ...

उत्तराखंड को देवभूमि कहा जाता है। यहां हर पहाड़ पर मंदिर, हर नदी में आस्था और हर गांव में एक कहानी बसती है। पर आज उसी देवभूमि की कहानी सबसे दर्दनाक मोड़ पर खड़ी है। 2011 की जनगणना के बाद से अब तक राज्य के 1,048 गांव पूरी तरह खाली हो चुके हैं और 2,500 से अधिक गांव ऐसे हैं, जो खाली होने की कगार पर हैं। पलायन आयोग की रिपोर्ट चीख-चीखकर कह रही है कि अगर यही हाल रहा तो आने वाले वर्षों में उत्तराखंड के नक्शे से कई गांव मिट जाएंगे। आंकड़े डराने वाले हैं। राज्य में गांवों से पलायन की गति हर साल लगभग 15 प्रतिशत बढ़ रही है। इसका मतलब है कि हर साल हजारों परिवार अपना घर, गांव, खेत और अपनी जड़ें छोड़कर शहरों की ओर जा रहे हैं। सबसे अधिक असर पहाड़ी जिलों अल्मोड़ा, पौड़ी, टिहरी, चमोली और बागेश्वर पर पड़ा है। अल्मोड़ा जिले में अकेले 250 गांव ऐसे हैं, जहां आबादी 50 से भी कम रह गई है और 15 गांव पूरी तरह वीरान हो चुके हैं।

पलायन का कारण कोई एक नहीं है। यहां कारणों का ऐसा जाल है, जिसने पूरे पहाड़ को जकड़ लिया है। रोजगार की कमी सबसे बड़ी समस्या है। गांव में युवाओं के पास खेती के अलावा कोई विकल्प नहीं है और वह खेती भी अब घाटे का सौदा बन गई है। जंगली जानवर फसलें नष्ट कर देते हैं, पानी की कमी है और बाजार तक पहुंच आसान नहीं है। इसलिए 26 से 35 वर्ष के युवा सबसे पहले गांव छोड़ रहे हैं। रिपोर्ट के अनुसार, पलायन करने वालों में सबसे बड़ा वर्ग कामकाजी उम्र का है। यानी गांवों से सबसे पहले वही लोग जा रहे हैं, जिन पर भविष्य की जिम्मेदारी थी। परिणाम यह है कि गांवों में अब न युवाओं की चहल-पहल बची है और न बच्चों की किलकारियां।

शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव भी पलायन की बड़ी वजह है। पहाड़ के दूर-दराज के गांवों में आज भी माध्यमिक विद्यालय नहीं हैं। कई स्थानों पर बच्चों, विशेषकर बेटियों, को 12वीं तक पढ़ने के लिए कई किलोमीटर पैदल चलना पड़ता है। अस्पताल दूर हैं, सड़कें अधूरी हैं और प्रसव जैसी आपात स्थिति में महिलाओं को डोली के सहारे अस्पताल पहुंचाना पड़ता है। ऐसे में कोई भी माता-पिता अपने बच्चों का भविष्य वहां नहीं देखता। पहले बच्चे पढ़ाई के लिए शहर जाते हैं, फिर धीरे-धीरे पूरा परिवार वहीं बस जाता है।

सामाजिक स्थिति भी चिंताजनक हो गई है। अनेक गांवों में विवाह योग्य युवकों के लिए रिश्ते नहीं मिल रहे हैं। लगभग 120 गांव ऐसे चिन्हित किए गए हैं, जहां युवकों की शादी नहीं हो पा रही, क्योंकि लड़की वाले पहाड़ में रिश्ता करने से इनकार कर देते हैं। उनका तर्क है कि जहां बिजली, पानी, सड़क और मोबाइल नेटवर्क जैसी बुनियादी सुविधाएं नहीं हैं, वहां बेटी का भविष्य कैसे सुरक्षित होगा। नतीजा यह है कि गांवों में कई घरों पर ताले लटक गए हैं और बचे हुए बुजुर्ग अकेले अपनी जमीन, घर और देवस्थलों की रखवाली कर रहे हैं।

वीरान हो रहे उत्तराखंड के गांव

पलायन आयोग ने वर्ष 2017 में चेतावनी दी थी कि यदि समय रहते प्रभावी कदम नहीं उठाए गए तो 2025 तक 2,462 गांव निर्जन हो जाएंगे। आज स्थिति उसी दिशा में बढ़ती दिखाई दे रही है। इसका अर्थ है कि हर वर्ष लगभग 200 गांव वीरान होने की ओर बढ़ रहे हैं। सरकारों ने सड़क, बिजली और पानी पर कुछ काम अवश्य किया, लेकिन स्थायी रोजगार सृजन पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया। मनरेगा ने सीमित अवधि का रोजगार दिया, होमस्टे और पर्यटन की योजनाएं बनीं, लेकिन उनका प्रभाव व्यापक नहीं हो सका। कृषि के लिए सब्सिडी दी गई, पर जंगली जानवरों से फसलों की सुरक्षा का कोई प्रभावी समाधान नहीं निकला। निराश होकर किसानों ने खेती छोड़नी शुरू कर दी।

इस पलायन का सबसे बड़ा नुकसान उत्तराखंड की संस्कृति और पर्यावरण को हो रहा है। सदियों पुराने गांव खाली हो रहे हैं, मंदिरों में पुजारी नहीं बचे, खेत बंजर हो रहे हैं और जंगल आबादी तक पहुंच रहे हैं, जिससे मानव-वन्यजीव संघर्ष भी बढ़ रहा है। दूसरी ओर देहरादून, हल्द्वानी और ऋषिकेश जैसे शहरों पर आबादी का दबाव लगातार बढ़ता जा रहा है।

पलायन आयोग ने गांवों को आर्थिक इकाई बनाने, 'एक गांव-एक उत्पाद' जैसी नीति लागू करने, टेलीमेडिसिन और दूरस्थ शिक्षा को बढ़ावा देने, होमस्टे और साहसिक पर्यटन विकसित करने तथा हर गांव तक सड़क और इंटरनेट पहुंचाने जैसे सुझाव दिए हैं। कुछ क्षेत्रों में जैविक खेती, हर्बल उत्पाद और ग्रामीण पर्यटन के सकारात्मक परिणाम भी मिले हैं, लेकिन इन्हें पूरे राज्य में मिशन मोड में लागू करने की आवश्यकता है। राजनीतिक इच्छाशक्ति भी उतनी ही जरूरी है। जनप्रतिनिधियों को गांवों की वास्तविक स्थिति समझनी होगी और समाज को भी अपने गांवों से जुड़ाव बनाए रखना होगा।

उत्तराखंड का पलायन केवल जनसंख्या का प्रश्न नहीं, बल्कि उसकी पहचान का संकट है। यदि गांव खाली हो गए तो देवभूमि की आत्मा भी सूनी हो जाएगी। लोकगीत, लोकनृत्य और परंपराएं इतिहास के पन्नों तक सिमट जाएंगी। इसलिए सरकार, समाज और युवाओं को मिलकर यह संकल्प लेना होगा कि गांव बचेंगे, तभी उत्तराखंड बचेगा और तभी देवभूमि का वास्तविक अर्थ भी सुरक्षित रह सकेगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)